10 जनवरी 2011
जिनवाणी 404

श्रमणाचार और आधुनिकता से ग्रस्त श्रावक

श्रीमती मोहनकौर जैन

वैज्ञानिक युग में श्रावकों की बदलती जीवनचर्या एवं सुविधाओं के कारण श्रमण-श्रमणियों को सरलता से शुद्ध आहार-पानी मिलना भी कठिन हो गया है। विद्युत काल बेल, कुत्ता-पालन, गैस चूल्हा, रेफ्रीजरेटर, टेलीफोन, लिफ्ट आदि अनेक ऐसे वैज्ञानिकयुगीन रोग हैं, जो श्रमणाचार के परिपालना में पालक हैं। श्रावकों को अपने आचार का बोध भी नहीं है तथा श्रमणों की चर्या से भी अनभिज्ञ हैं, अतः श्रावकों को इस दिशा में जागरूक होने की आवश्यकता है।-सम्पादक

अल्पाहारी, उग्र विहारी, अपरिग्रही, वीतराग धर्म के आराधक एवं अहिंसक जीवन शैली अपनाने वाले निर्ग्रन्थ मुनिराजों के सम्पर्क में आते ही सुखी जीवन के रहस्य का पता चलता है। उनके सम्पर्क में आने व़ाला व्यक्ति शान्त, सौम्य, सरल, सन्तोषी, क्षमा की साक्षात् प्रतिमा के परमाणुओं से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। उसे लगता है दुनिया में सबसे सुखी यदि कोई है तो मात्र अहिंसा के पुजारी, षट्काय के प्रतिपालक, कंचन-कामिनी के त्यागी, वीतरागी जैन श्रमण। उनके दर्शन मात्र से आत्म-शान्ति की प्राप्ति होती है और ऐसा लगता है, काश! मैं भी मोह-ममत्व का त्याग कर साधनापथ पर प्रतिपल अग्रसर होते हुए मनुष्य जन्म को सार्थक करूँ, पर यह क्या? दूसरे ही क्षण विचार आता है- मेरे पीछे पेट लगा है। पेट की क्षुधा तो शान्त करनी ही होगी। वर्तमान में 'अम्मा पियरो' कहलाने वाले हमारे श्रावक-श्राविकाएँ अपने श्रावकाचार को भूलते जा रहेहैं। कारण स्पष्ट है वर्तमान में श्रावक-श्राविकाएँ मूल रूप में वैज्ञानिकयुगीन रोगों से ग्रस्त हैं। वे पूर्ण रूप से विज्ञान के दास बन चुके हैं, ऐसी स्थिति में भगवान् महावीर ने जो श्रमणाचार बताया है, क्या मैं उसका पालन कर सकूँगा? कया मुझमें इतना साहस है? कहा भी है कि- ''तलवार की धार पर चलना सरल है, पर जैन श्रमणाचार का पालन करना उससे कहीं कठिन है।''

अब लीजिए, मैं पहले उन आधुनिक वैज्ञानिक रोगों से भी आपका परिचय करवा दूँ।

1. **प्रथम रोग है विद्युत कॉल बेल-** वर्तमान में संयुक्त परिवार प्रथा विलुप्त हो चुकी है। जहाँ-तहाँ एकाकी एवं छोटे परिवार में लोग विघटित हो गए हैं। शहर के बाहर फ्लेट में रहते हैं, अड़ौस-पड़ौस से उनका कोई लेना-देना नहीं। ऐसी स्थिति में घर के पट बन्द रहते हैं। घर के बाहर कॉल बेल का स्वीच लगा रहता है। श्रमणाचार के पालक न तो बन्द द्वार खोलते हैं और न ही विद्युत कॉल-बैल का स्वीच ऑन-आफ करते हैं। ऐसी स्थिति में साथ चलने वाला श्रावक कॉल-बेल की सहायता से गृह-

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वामी को यह सूचना देना चाहे कि 'श्रमण' पधारे हैं तो अग्निकाय की विराधना के कारण पूरे दिन के लिए वह घर अकल्पनीय (अग्राह्य) मानकर 'श्रमण' उस घर का आहार-पानी नहीं लेते। कई बार तो हमारे नादान श्रावक को यह भी कहते सुना है कि बापजी यह कॉल-बैल तो सैल की है आपको आहार-पानी लेने में ऐतराज क्यों? मगर वे यह नहीं जानते कि चाहे सैल हो या विद्युत अग्नि तो अग्नि है।

2. **दूसरा रोग है देशी-विदेशी कुत्ते-** कुछ श्रावक अपने घर की चौकीदारी हेतु देशी-विदेशी कुत्ते पालते हैं। स्वयं तो श्रावक होने के नाते माँस-मदिरा व अण्डे के त्यागी होते हैं, मगर कुत्ते को अण्डा, मांस आदि दूसरों के द्वारा खिलाया जाता है। ऐसी स्थिति में यदि 'श्रमण' का आगमन हो जाये और घर-आँगन में कहीं मांस या अण्डे के अवशेष मिल जायें तो जैन श्रमण उस घर में प्रवेश नहीं करते।

3. **तीसरा रोग है गैस का चूल्हा-** प्राचीन काल से भारत में संयुक्त परिवार प्रथा चली आ रही थी। एक ही परिवार में 30-30, 40-40 सदस्य रहते थे। 'सादा जीवन उच्च विचार' उनकी जीवन शैली थी। उनका कहना था- 'मोटा खाओ, मोटा पहनो।'

लकड़ी अथवा कोयले में भोजन बनाया जाता था। परिवार के सारे सदस्यों के भोजन करने के पश्चात् फुलकों की 'कुण्डी' पूरी भरी रहती थी, इसे वे अपने घर का शगुन मानते थे। खीच-दलिया तथा साग-भाजी की हाण्डिया चूल्हे की गरमागरम राख पर रखी रहती थीं, फलस्वरूप दिन के दूसरे प्रहर अथवा इसके पश्चात् भी हमारे निर्ग्रन्थ संत-सती मण्डल आहार-पानी के लिए अचानक पधारते तो भी उन्हें शुद्ध अचित्त आहार तथा प्रासुक जल सहज प्राप्त हो जाता था। हमारे श्रावक/श्राविकाएँ भी बड़े विवेकवान हुआ करते थे।

इसके विपरीत आज का युग है विद्युत हीटर तथा गैस-चूल्हे का। हमारी श्राविकाएँ चूल्हा जलाने के लिए जरा भी श्रम करना नहीं चाहती। वर्तमान में चूल्हा, अंगीठी और स्टोव तो बच्चों के लिए कौतूक का विषय रह गए हैं। वर्तमान में गूंथा हुआ आटा फ्रीज में रखा रहता है, जब भी घर का कोई सदस्य भोजन के लिए आता है तो उसके लिए 4-5 गरमागरम फुलके बना दिये जाते हैं, तत्पश्चात् शेष सामग्री फ्रीज में रख दी जाती है, फिर फुलकों की कुण्डी की आवश्यकता ही क्या?

4. **चौथा रोग है रेफ्रीजरेटर (फ्रीज)-** भोजन के पश्चात् साग-भाजी, दूध-दही, आटा आदि अचित्त अथवा सचित्त फल एवं भोज्य सामग्री फ्रिज में रख दी जाती है। ऐसी स्थिति में यदि भाग्यवश सन्त-सतियां आहार के लिए किसी श्रावक के घर पधार भी जायं तो मेरी बहिनें सकपका जाती हैं, भरे-पूरे परिवार में सब कुछ होते हुए भी मेरी बहिनें संत-साध्वीजी को क्या बहरावें। भले ही टॉफी या बिस्कुट की भावना भा लें, पर क्या इससे कभी किसी का पेट भरा है? इतना ही नहीं वर्तमान में तो अधिकतर टॉफी और बिस्कुट में भी अण्डे का रस आदि मिला होने के कारण वे जैन श्रमणों व श्रावकों को लिए सर्वथा निषिद्ध हैं।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

5. **पाँचवा रोग है टी.वी.-** वर्तमान में हमारे भाई-बहिन जिस रोग से ग्रस्त हैं उससे आप और हम सभी परिचित हैं, वह है टी.वी.। टी.वी. तो वास्तव में टी.बी. की बीमारी से भी भयंकर है। जैसे ही अपने कार्य से फुर्सत मिली कि हमारी बहिनें टी.वी. से पाश्चात्त्य शैली के नाटक आदि देखने में इतनी मशगूल हो जाती हैं कि उन्हें होश ही नहीं रहता कि वह एक श्राविका है। उसे यह विचार ही नहीं आता कि कहीं मेरे घर में निर्ग्रन्थ संत-साध्वीजी पधार कर खाली न लौट जायें, मुझे सुपात्रदान हेतु भावना भानी चाहिए और समय पर शुद्ध भोजन बनाकर घर के सदस्यों को खिलाना है, साथ ही होटालों के सड़े-गले या दूषित पदार्थ खाने से बच्चों को बचाना है। अफसोस इस बात का है कि वर्तमान में मेरी बहिनें अपने आपको श्राविका तो कहती हैं, पर यदि उनसे यह प्रश्न किया जाय कि क्या वे श्राविकाचार का पालन करती है? क्या उन्हें सचित्त-अचित्त की जानकारी है तो शायद वर्तमान में 95% बहिनों से नकारात्मक उत्तर ही मिलेगा। तो लीजिए मैं सर्वप्रथम अपनी श्राविका कहलाने वाली बहिनों से यह निवेदन करना चाहूँगी कि वे अपने श्राविकाचार का पालन करती हुई शुद्ध श्रमणाचार का पालन कराने में हमारे गुरु भगवन्तों का सहयोग करें।

6. **छठा रोग है फोन-** सचित्त-अचित्त की जानकारी के अभाव में यदि सौभाग्य से जैन श्रमण घर में पधारें और दूसरी ओर फोन की घण्टी आ जाए तो हमारी बहिनें अथवा बन्धु पहले फोन को महत्त्व देंगे। फोन को उठाते ही अग्निकाय की विराधना के कारण क्षमाधारी श्रमण बिना बोले उस घर से पुनः लौटे जाते हैं और उस दिन घर से कुछ भी अन्न-जल ग्रहण नहीं करते।

7. **सातवां रोग है सैल की घड़ी-** अधिकांशतः भाई-बहिनों के हाथ में सैल की घड़ी बंधी होती है, इससे भी अग्निकाय के जीवों की विराधना होने के कारण उस भाई-बहिन के हाथ से अथवा उसका छुआ अन्न-जल संतों के लिये ग्राह्य नहीं होता है।

8. **आठवां रोग है लिफ्ट की सुविधा-** महानगरों में बहुमंजिले भवनों में रहने वाले लोग लिफ्ट का प्रयोग करते हैं, किन्तु जैन श्रमण पद-यात्रा करते हैं। इतनी ऊँची-ऊँची मंजिलों में सीढियों से चढ़ना और फिर खाली लौटना कब तक संभव है।

श्रावकाचार से अनभिज्ञता

आहार की बात तो दूर रही, वर्तमान में शुद्ध धोवन पानी भी नसीब नहीं होता। बर्तन पाउडर से धोए जाते हैं जो धोवन पानी के रूप में काम नहीं आता। गैस के चूल्हों, भट्टियों तथा बिजली के हीटर की कृपा से राख का तो नामो-निशान ही मिटता नज़र आ रहा है। धोवण किन-किन चीजों से बनता है, श्रावकाचार व स्वाध्याय के अभाव में इसकी जानकारी नहीं होने के कारण राख के बन्द डिब्बे बाजार से खरीदे जाते हैं। जिनमें भरी होती है श्मशान की राख। जरा सोचिये, ऐसे युग में श्रमणों का कैसे निभे शुद्ध श्रमणाचार। अनुभवियों ने ठीक ही तो कहा है कि-

जैसा खावे अन्न, वैसा होवे मन,
जैसा पीवे पानी, वैसी होवे वाणी।।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

वर्तमान में यह कहावत पूर्ण रूप से चरितार्थ हो रही है। अशुद्ध और अशुभ भाव से बहराये हुए आहार-पानी का प्रभाव हमारे संत-साध्वीमण्डल के दिलो-दिमाग पर भी पड़ने लगा है। कुछ संत-साध्वी तो कठिन श्रमणाचार के पालन से भयभीत हो पुनः गृहस्थ बनने लगे हैं, तो कुछ चाहकर भी जैन भागवती-दीक्षा लेने से हिचकिचाते हैं।

घटता आचार

कुछ सम्प्रदायों में तो बदलते परिवेश को देखकर भगवान् महावीर के द्वारा बताये 52 अनाचारों की पालना में परिवर्तन कर दिया गया है। कुछ सम्प्रदायों में पद-यात्रा के स्थान पर कार व वायुयान द्वारा यात्राएँ होने लगी हैं तथा श्रमण नंगे पांव न रहकर कपड़े व प्लास्टिक के जूते पहनने लगे हैं। धोवण के स्थान पर नल का पानी सचित्त-अचित्त जो भी श्रावक बहरावें, ले लेते हैं, तो विहार में टिफिन-व्यवस्था भी प्रारम्भ कर दी गई है, तो कुछ सम्प्रदायों में पंखे, बिजली तथा माईक का प्रयोग होने लगा है। ऐसे में हमारी श्राविका बहिनें, अपने श्राविकाचार को बिल्कुल ही भुलाती जा रही हैं। समझ में नहीं आता, कैसे चलेगा भगवान् महावीर का यह जैन धर्म।

जहाँ जैन परिवारों में सूर्य की साक्षी में भोजन किया जाता था तथा सूर्य के उदय होने से पूर्व मुँह में पानी भी नहीं डाला जाता था, वहीं आज मशीनरी युग में 'अर्थ' की होडा-होडी में हमारे श्रावकगण रात्रि 11-12 बजे तक भोजन करते हैं। रात्रि एक बजे तक सोते हैं। प्रात 9-10 बजे उठते हैं। 11 बजे तक चाय-नाश्ता लिया जाता है तो ऐसी स्थिति में जरा विचार कीजिये, कहाँ से मिलेगा जैन श्रमणों के अनुकूल जैन संत-साध्वी जी को प्रासुक एषणीय आहार-पानी? कैसे बढ़ेगी हमारे निर्ग्रन्थ गुरुओं की संख्या?

जैन संतों को किस वस्तु की जरूरत है, वे मुँह से कहते नहीं, हमारे श्रावक धन कमाने में लगे हैं, फिर महिलाएँ भी नौकरी पेशा होने के कारण वे भी नौकरी पर आश्रित रहती हैं। एकल परिवार में वृद्ध अनुभवी लोगों का साया उन पर रहता नहीं, अतः संतों का उपदेश उन्हें अच्छा लगता है, पर उनकी जीवन शैली से वे परिचित नहीं होते। श्रावक कहलाने वाले श्रावकाचार अपनाते नहीं। संत अच्छे लगते हैं, पर जिगर के टुकड़े महाराज को बहराते नहीं। बेटे-बेटी बहराने की बात तो दूर रही, पर शुद्ध आहार-पानी बहराना भी नहीं जानते। ऐसी स्थिति में समता के पुजारी निर्ग्रन्थ तो सहज में ऊणोदरी तप कर अपनी आध्यात्मिक यात्रा करते रहते हैं, पर यह कब तक? जरा आप भी सोचिये- ऐसा क्यों?

नामधारी श्रावकों की संख्या में तो निरन्तर वृद्धि हो रही है, परन्तु श्रमणाचार एवं श्रावकाचार से अनभिज्ञ श्रावक ही अधिक हैं।

समय रहते हम श्रावक/श्राविकाओं को सजग होना होगा। हमें भगवान् महावीर द्वारा बनाये श्रावक-धर्म को जीवन में उतारना होगा। तभी हम अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए श्रमणाचार के शुद्ध-पालन में सहयोगी बन सकते हैं।

-पूर्व सचिव, श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जैन कॉलोनी, राइकाबाग, जोधपुर (राज.)

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org